THE ECONOMIC TIMES

Date: 13-08-24

Slim Olympickings, A Correction Strategy

ET Editorials

The world's most populous country, and 5th-largest economy, ranked 71st among 206 countries in the just-concluded Paris Olympics. Clearly, the proverbial 'hopes and prayers' of 1.4 bnplus people doth not an impressive sporting nation make. Improving India's performance in future needs more than patriotic yelling. It requires changing the system of rewards, eschewing the propensity to politicise the sporting arena, and treating athletics as an avenue to build Viksit India.

The current system of central and state governments giving medal-winners — six this time, one less than in Tokyo — cash awards should be replaced by ploughing that amount and more for developing grassroots facilities in the medal-winners' towns. This is likely to throw up many more potential alpha athletes. Improving local facilities will ease the journey from local to state level to regional, then national and on to the international arena for young athletes. Such an approach will also augment the longevity of athletes' peak performance and career curve. Powering through injuries aggravated by lack of proper treatment, 'rough and tough' training adversely affects the peak age of athletes. More often than not, Indian athletes are at their prime before they reach the world stage. This queue must quicken.

For most Indian athletes, a difficult journey to the big stage makes it doubly hard to make way for the next gen. They, along with their movers and backers, become recalcitrant gatekeepers restricting free entry to new talent. Absence of systemic nudges to create a continuous supply of potential world-class athletes, and the propensity to corner opportunities, is made worse with politicisation of sports. Medals will come if this creaky architecture is jettisoned.

दैनिक भास्कर

Date: 13-08-24

सभापति पर 'अविश्वास' के मायने क्या हैं?

संपादकीय

संख्यात्मक रूप से सबल विपक्ष ने राज्य सभा के सभापति के खिलाफ अविश्वास प्रस्ताव लाने का उपक्रम शुरू किया है। उपराष्ट्रपति ही राज्य सभा (जो राज्यों की परिषद भी है) के पदेन सभापति होते हैं। चूंकि इनका चुनाव राज्य सभा और

लोक सभा, दोनों मिलकर करती हैं, लिहाजा इनके हटाए जाने के लिए तीन शर्तें हैं- प्रस्ताव राज्य सभा में पेश हुआ हो, जहां सदन की तत्कालीन सदस्य संख्या का बहुमत इसे पारित करे, लोकसभा इसे अनुमोदित करे और अविश्वास प्रस्ताव का नोटिस 14 दिन पहले दिया गया हो। लोक सभा में विपक्ष अल्पमत में है यानी प्रस्ताव पारित नहीं होगा, लेकिन जिस सदन के हर सत्र में पीठासीन अधिकारी और विपक्ष के बीच रस्साकसी चल रही हो, उस सदन में पीठासीन अधिकारी के खिलाफ अविश्वास प्रस्ताव पारित होना ही सभापति के लिए असहज स्थिति बना देगा। इस स्थिति का असली कारण यह है कि जब सरकार पर हमले होते हैं, तो शीर्ष पदों पर बैठे कुछ लोग पद की मर्यादा भूलकर सक्रिय राजनीतिक कार्यकर्ता बन जाते हैं। यह वही संसद है जहां करीब 153 सांसदों को निलंबित कर अहम विधेयक पारित करा लिए गए थे या जहां विपक्ष के किसान बिल पर वोट की मांग को अनसुनी कर बिल पारित करा लिए गए। चुनाव के बाद संसद की केमिस्ट्री बदली । नए सदन में सत्रावसान के दो दिन पूर्व राज्य सभा में विपक्ष के आरोपों पर सांसद निलंबित नहीं किए गए बल्कि सभापति गुस्से में यह कहते हुए अपनी कुर्सी से उठकर चले गए कि विपक्ष चेयर का अपमान कर रहा है। यह संख्यात्मक रूप से मजबूत विपक्ष का ही दबाव था कि विवादास्पद वक्फ कानून का मसौदा जेपीसी को सौंपा गया। आने वाले दिनों में संसद में यह गर्माहट कहीं आग न बने। हिंडनबर्ग खुलासा भी आक्रामक विपक्ष के तरकश का नया तीर होगा।

Date: 13-08-24

हमारे पास खेल प्रतिभाएं कम नहीं, सिस्टम में गड़बड़ी है

अभय कुमार दुबे, (अम्बेडकर विवि, दिल्ली में प्रोफेसर)

टोक्यो ओलिम्पिक में हमारे खिलाड़ियों ने सात (एक स्वर्ण समेत) पदक जीते थे। पेरिस में एक पदक कम हुआ, और स्वर्ण घटकर रजत रह गया। देखा जाए तो यह कोई उल्लेखनीय गिरावट नहीं है। लेकिन इससे यह तो पता चलता ही है कि खेलों की दुनिया में हम आगे नहीं बढ़ रहे हैं और एक दीर्घकालीन जड़ता के शिकार हैं।

इसका कारण हमारे खिलाड़ियों में प्रतिभा और लगन की कमी भी नहीं है। प्रतिभा का तो विस्तार हो रहा है। उसमें विविधता आ रही है। नीरज चोपड़ा का एथलेटिक्स के विश्व-मंच पर उदय इसका सबसे बड़ा प्रमाण है।

हरियाणा का खेलों के असाधारण केंद्र के रूप में उभरना यह भी बताता है कि अगर देश में ऐसे दो-तीन केंद्र और बन जाएं तो दुनिया में हमारा सितारा बुलंद होने के लिए आवश्यक आधार तैयार हो जाएगा।

1975 में अजितपाल सिंह के नेतृत्व में भारत ने कुआलालम्पुर में पाकिस्तान को हराकर हॉकी का विश्व कप जीता था। इसके आठ साल बाद लॉर्ड्स के मैदान में कपिल देव के नेतृत्व में भारत ने क्रिकेट का विश्व कप जीता। उसी समय हमारी प्राथमिकताएं स्पष्ट हो गई थीं।

क्रिकेट का कप सुविधाओं, शाबासियों, ख्याति, धन-लाभ, भविष्य के अवसरों और सितारा बनने की संभावनाओं से लबालब निकला। हॉकी के कप और उसके विजेताओं का क्या हुआ? विश्व हॉकी संघ पर काबिज यूरोपीय ताकतों ने नियम बदल कर घास पर खेली जाने वाली पारम्परिक हॉकी का खात्मा कर दिया।

एस्ट्रो टर्फ और सुपर टर्फ का युग आया। हम घास पर ही प्रैक्टिस करते रहे। मॉन्ट्रियल ओलिम्पिक में हमारी विश्व विजेता टीम हारी। इसके बाद हम हार के लिए अभिशप्त हो गए। आज भी हॉलैंड जैसे छोटे-से देश के पास हमसे कई गुना ज्यादा हॉकी के कृत्रिम मैदान हैं।

सरकारी प्रयासों और निजी स्तर पर पूर्व खिलाड़ियों द्वारा की गई संस्थागत कोशिशों से इस दुर्गति में पिछले दिनों कुछ सुधार हुआ है। लेकिन खेलों का संस्थागत ढांचा पहले की ही तरह बुरी हालत में है। इनकी एसोसिएशनें पुराने जमाने की जमींदारियों से अलग नहीं हैं।

नेताओं और उनके परिजनों का इन एसोसिएशन पर कब्जा है। इस बार भारतीय महिला हॉकी टीम ओलिम्पिक में क्वालिफाई ही नहीं कर पाई। कारण था एसोसिएशन में सत्ता-परिवर्तन और कोच के साथ हुआ झगड़ा।

धनराज पिल्लै की कप्तानी में जो हॉकी टीम विकसित हुई थी, उसे 'गोल्डन जनरेशन' का नाम दिया जाता है। लेकिन इसी टीम को फेडरेशन के अध्यक्ष ने टूर्नामेंट में अच्छा प्रदर्शन करने के बावजूद निलम्बित कर दिया था। पिछले और इस ओलिम्पिक के बीच मुक्केबाजी संघ ने कोच को चार बार बदला।

तीरंदाजी फेडरेशन पर पूरे 44 वर्ष तक एक ही व्यक्ति का कब्जा रह चुका है। कुश्ती फेडरेशन का तो जिक्र होते ही जंतर मंतर पर पदक विजेता पहलवानों का धरना-प्रदर्शन याद आ जाता है। इनमें विनेश फोगाट भी शामिल थीं।

अगर भारत में खेलों का संस्थागत आधार दुरुस्त, चाक-चौबंद और सतर्क होता तो क्या होता? अगरहमारी बॉक्सिंग फेडरेशन प्रभावी होती तो निकहत जरीन को सीडेड खिलाड़ी के रूप में उतरने का मौका मिलता। आखिरकार वे अपने वर्ग में डबल वर्ल्ड चैम्पियन हैं। लेकिन अनसीडेड बॉक्सर के रूप में उन्हें दूसरे मैच में ही विश्व की नंबर एक बॉक्सर से लड़कर हारना पड़ा।

अगर वे सीडेड होतीं तो इस खिलाड़ी से फाइनल में भिड़ना पड़ता, जहां रजत पदक सुनिश्चित होता। हॉकी टीम ने कांस्य जीता, लेकिन उसका प्रदर्शन इस नतीजे से कहीं अच्छा था। इसका कारण भी संस्थागत माना जाएगा।

अतीत में निशानेबाजी में स्वर्ण पदक जीतने वाले अभिनव बिंद्रा ने अपनी उपलब्धि का श्रेय शूटिंग महासंघ को देने से इंकार कर दिया था। अगर उनके पिता ने निजी संसाधनों का इस्तेमाल करके उनका प्रशिक्षण न करवाया होता तो अभिनव पदक न जीत पाते। नीरज चोपड़ा चोटिल होने के कारण लम्बे अरसे प्रभावी ट्रेनिंग नहीं कर पा रहे थे। क्या भारतीय एथलेटिक फेडरेशन भारत के सर्वश्रेष्ठ खिलाड़ी की इस स्थिति के लिए कुछ जिम्मेदारी महसूस करती है?

भारत में खेलों का संस्थागत ढांचा पहले की ही तरह बुरी हालत में है। इनकी एसोसिएशनें पुराने जमाने की जमींदारियों से अलग नहीं हैं। विभिन्न दलों के राजनेताओं और उनके परिजनों का इन एसोसिएशनों पर कब्जा है।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 13-08-24

कोटा नहीं समान अवसर सृजित करने से बनेगी बात

आर जगन्नाथन, (लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं।)

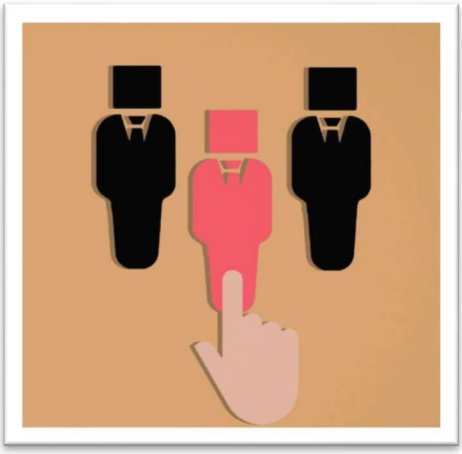

भारत एक कुत्सित शिक्षा एवं रोजगार कोटा व्यवस्था अपनाने की दहलीज पर खड़ा है। असंवेदनशील राजनीति एवं न्यायिक हस्तक्षेप सहित कई कारणों से भारत इस गुत्थी में उलझता जा रहा है। क्षेत्रीय राजनीतिज्ञ और कांग्रेस नेता राहुल गांधी भारत में जाति आधारित जनगणना कराए जाने पर जोर दे रहे हैं, वहीं उच्चतम न्यायालय ने आरक्षण पर हाल में अपने एक आदेश में किसी भी श्रेणी में वास्तविक रूप से पिछड़े लोगों के लिए कोटा में अलग से कोटा (सब-कोटा) तैयार करने के विचार का समर्थन किया है। हालांकि, न्यायालय ने राजनीतिक दलों को यह चेतावनी भी दी है कि न्यायपालिका मनमाने ढंग से सृजित अलग से कोई कोटा स्वीकार नहीं करेगी। इस तरह, यह आदेश जाति-आधारित सर्वेक्षण की बात कहता है।

उच्चतम न्यायालय का आदेश अनुसूचित जाति (एससी), अनुसूचित जनजाति (एसटी) और अन्य पिछड़ी जातियों (ओबीसी) में संपन्न समूहों को उसी वृहद श्रेणियों में दूसरे लोगों के खिलाफ खड़ा कर देगा। इसका कारण यह है कि आदेश में उन जातियों के लिए अवसरों में कमी करने की बात कही गई है, जो अब तक कोटा से सबसे अधिक लाभान्वित हुए हैं। इससे अंतर-जाति टकराव शुरू हो जाएगा।

कांग्रेस के कुछ दलित नेता जैसे पी एल पुनिया और कुमारी शैलजा उच्चतम न्यायालय का यह आदेश निष्प्रभावी करने के लिए संविधान में संशोधन की मांग कर रहे हैं। स्पष्ट है कि राहुल गांधी का यह दांव कांग्रेस के लिए मुसीबत बन सकता है। यह बात ध्यान देने योग्य है कि मणिपुर में जारी मौजूदा हिंसा पिछले साल न्यायालय के उस आदेश के बाद भड़की थी जिसमें कहा गया था कि हिंदू मैतेई भी अनुसूचित जाति माने जा सकते हैं। कुकी समुदाय ने इसका कड़ा विरोध किया था। अब कल्पना मात्र कीजिए कि यही हिंसा अगर कई राज्यों में एससी, एसटी एवं ओबीसी के बीच भड़क जाए तो क्या होगा।

वर्तमान श्रेणी के भीतर कोटा का पुनर्वितरण करने के बजाय कुल कोटा में विस्तार करने पर राजनीतिक आम सहमति बनेगी क्योंकि कोटे की मांग केवल एक दिशा में रही है, यानी इनका दायरा बढ़ाने की मांग की जा रही है। कोई भी राजनीतिक दल कोटा लाभार्थियों के किसी उप-समूह को वंचित नहीं करना चाहता है। इंद्रा साहनी मामले में पारित आदेश में कोटा पर तय 50 प्रतिशत की सीमा से उच्चतम न्यायालय ने स्वयं आर्थिक पिछड़ेपन के लिए विशेष कोटा प्रावधान जोड़ने के नरेंद्र मोदी सरकार के प्रस्ताव को स्वीकार किया है। कुछ राज्य (तमिलनाडु) काफी पहले 69 प्रतिशत कोटा की तरफ कदम बढ़ा चुके हैं।

अब इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि कोटा समर्थकों के लिए 69-75 प्रतिशत कोटे का प्रावधान हासिल करना नया लक्ष्य होगा। संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (संप्रग) सरकार के दौरान निजी क्षेत्र में भी कोटे का प्रावधान करने का प्रस्ताव दिया गया (मगर बाद में कारोबार पर प्रतिकूल असर पड़ने की आशंका के बाद यह वापस ले लिया गया) मगर कांग्रेस ने न केवल 2024 के घोषणापत्र (न्याय पत्र में)में कोटा पर 50 प्रतिशत सीमा बढ़ाने के लिए संविधान संशोधन करने का वादा किया है बल्कि निजी शैक्षणिक संस्थानों में भी यह विभिन्न कोटा बढ़ाने की बात कही है। निजी क्षेत्र की नौकरियों में इन्हें लागू करना अब महज कुछ समय की बात रह गई है।

पहचान आधारित आक्रामक राजनीति का प्रसार और कोटा प्रणाली में अनवरत विस्तार रोकने के लिए केंद्र एवं राज्य सरकारों, बुद्धिजीवियों एवं निजी क्षेत्र के विचारकों को एससी, एसटी एवं ओबीसी में प्रतिस्पर्द्धी क्षमता बढ़ाने की एक वैकल्पिक रणनीति सुनिश्चित करने पर विचार करना चाहिए। इससे धीरे-धीरे कोटा प्रणाली आधारित व्यवस्था से दूर जाने में मदद मिलेगी। रोजगार के अवसर में बढ़ोतरी ऐसे किसी प्रयास का आधार होना चाहिए क्योंकि कोटा अंततः युवाओं के लिए उपयुक्त गुणवत्ता वाले रोजगार की कमी को परिलक्षित करता है। केंद्र, राज्य और स्थानीय निकायों को उन कानूनों को समाप्त करने के लिए मिलकर काम करना चाहिए, जो रोजगार सृजन की राह में बाधा बनते हैं।

विनिर्माण एवं सेवाओं में तकनीक एवं स्वचालन (ऑटोमेशन) के तेजी से इस्तेमाल से हुनरमंद लोगों की मांग बढ़ रही है। अत्यधिक सक्षम एवं हुनरमंद लोगों (जैसे साइबर विशेषज्ञ, न्यूरोसर्जन) की मांग काफी अधिक है और तकनीक संचालित मगर कम हुनर वाली नौकरियों (जैसे उबर चालक, सुरक्षाकर्मी, लॉजिस्टिक एवं डिलिवरी पर्सन, रिटेल क्लर्क) की भी उतनी ही मांग है। हालांकि, कोई भी साइबर सुरक्षा विशेषज्ञ या न्यूरो सर्जन की नियुक्ति कोटा के माध्यम से नहीं करना चाहेगा मगर कम हुनर वाली नौकरियों के लिए भर्तियां न्यूनतम योग्यता एवं पारदर्शी लॉटरी प्रणाली पर आधारित होनी चाहिए।

जब सरकार या निजी क्षेत्र (जो इस समय तीसरे पक्ष से काम कराने की तरफ मुड़ रहे हैं) अनुसेवक या कुरियर की भर्ती करना चाहते हैं तो कोटा जरूरी नहीं है, लॉटरियां विभिन्न जातियों के बीच नौकरियों का वितरण कर देंगी। किसी अतिरिक्त हुनर की जरूरत नियोक्ता (इस मामले में राज्य) की तरफ से पूरी की जा सकती है।

दूसरी बात यह है कि एससी, एसटी एवं ओबीसी श्रेणियों के छात्रों की कोचिंग एवं उनके मार्ग दर्शन की जरूरत है। यह व्यवस्था प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर से शुरू होकर स्नातक एवं तकनीकी शिक्षा तक जारी रहनी चाहिए। भारत में अनौपचारिक ट्यूशन पढ़ाने वाले शिक्षकों की हर जगह उपस्थिति है और सैकड़ों कोचिंग कक्षाएं प्रत्येक छात्रों की मांग पूरी कर रही हैं।

शिक्षुता (एप्रेन्टिसशिप के लिए पहसे से प्रतिबद्ध सरकार को कई स्तरों पर कोचिंग के लिए सब्सिडी मुहैया कराना चाहिए ताकि पीछे रह गई जातियां तकनीकी हुनर एवं उच्च खूबियां सीख सकें ताकि उन्हें एक अच्छे संस्थान में प्रवेश मिल जाए। शिक्षुता उस समय रुक जाएगी जब तकनीकी हुनर व्यापक स्तर पर जातियों एवं वर्गों तक पहुंच जाएगी।

तकनीकी हुनर जैसे अंग्रेजी या कोई एक भाषा धारा प्रवाह बोलने की क्षमता, संख्यात्मक जानकारियां उस शहरी क्षेत्रों में प्रति महीने 8,000-10,000 रुपये देने वाली नौकरी और 15,000-20,000 रुपये तनख्वाह में अंतर खत्म कर सकती है। इसका भी कोई कारण नहीं है कि सरकारी विद्यालयों का संचालन निजी न्यासों या कंपनियों द्वारा क्यों नहीं किया जाए

क्योंकि मुख्य वित्त पोषण तो सरकारी खजाने से आ रहा है। कंपनियां अपनी तरफ से शिक्षकों के प्रशिक्षण, शिष्टाचार बहाल करने और बुनियादी ढांचे पर रकम खर्च खर्च कर सकती हैं।

कई होनहार एवं योग्य छात्रों एवं पहली बार नौकरी खोज रहे लोगों के पास लक्ष्य में सफल होने के लिए आवश्यक जानकारियां नहीं होती हैं। प्रत्येक विद्यालय, महाविद्यालय या कोचिंग संस्थानों में मार्गदर्शक तैयार करने की नीति से लाभ मिल सकता है। कंपनियां चाहें तो अपने निगमित सामाजिक उत्तरदायित्व (सीएसआर) के कोष से अवश्य ऐसा कर सकती हैं। अरबपतियों से वित्तीय सहायता वालों न्यासों के माध्यम से भी ऐसा किया जा सकता है। इनके अलावा कई अन्य बेहतर विचार या उपाय भी हैं जिन्हें आजमाया जा सकता है और अगर ये कारगर रहते हैं तो इनका विस्तार किया जा सकता है।

निष्कर्ष यही निकलता है कि सामाजिक कारणों से विभिन्न लाभों से वंचित छात्रों एवं लोगों के लिए हमें समान अवसर उपलब्ध कराने होंगे। यह सोचना गलत है कि केवल कोटा व्यवस्था के माध्यम से अवसरों की समानता सुनिश्चित की जा सकती है। केवल कोटा से विकसित भारत बनाने का सपना पूरा नहीं हो सकता। अगर कोटा पर हम आपस में यूं ही लड़ते रहें तो यह लक्ष्य प्राप्त करना और भी मुश्किल हो जाएगा

जनसत्ता

Date: 13-08-24

आगे की सुध

संपादकीय

पेरिस ओलंपिक 2024 के समापन के साथ ही अब सभी देश और उनके खिलाड़ी अगली बार की तैयारी में लग जाएंगे। भारत की टीम भी ओलंपिक 2024 में एक रजत और पांच कांस्य पदक जीत कर अपनी टीम के साथ वापस आ गई है। इस आयोजन में भाग लेने और पदक हासिल कर पाने वाले देशों की संख्या के लिहाज से देखें तो भारत का प्रदर्शन कुछ बेहतर जरूर रहा, लेकिन कुल मिला कर यही कहा जा सकता है कि हमें ओलंपिक में अपनी मजबूत जगह बनाने के लिए अभी काफी तैयारी की जरूरत है। गौरतलब है कि ओलंपिक 2024 में शामिल एक सौ चौदह देशों की कोई पदक नहीं मिल सका। पदक तालिका में भारत को इकहत्तरवां स्थान मिला। जबकि तोक्यो ओलंपिक, 2020 में भारत ने एक स्वर्ण सहित सात पदक जीते थे और पदक तालिका में अड़तालीसवें स्थान पर रहा था। इसलिए उम्मीद थी कि इस बार पदक तालिका में भारत को पहले से बेहतर जगह मिलेगी। हाकी और तीरंदाजी में भारत के खिलाड़ियों ने अच्छी दखल दी और पदक जीते, मगर कुछ खेलों में अप्रत्याशित नतीजों और उतार-चढ़ावों की वजह से वह उम्मीद धुंधली रही।

खेलों में जीत-हार होती रहती है। फिर भी भारत की आबादी और ओलंपिक की चुनौतियों के मद्देनजर की गई तैयारियों को लेकर यह सवाल जरूर उभरता है कि आखिर क्या वजह है कि जहां छोटे-छोटे देश भी खेलों की दुनिया में बड़ी उपलब्धियां हासिल कर लेते हैं, वहीं हमारे देश को संतोषजनक जगह भी नहीं मिल पाती। साफ है कि अभी इस दिशा में बहुत कुछ करने की जरूरत है। प्रतिभाओं की खोज से लेकर उन्हें उचित और विश्वस्तरीय प्रशिक्षण मुहैया कराने की

पहलकदमी सरकार को ही करनी होगी। पर्याप्त धन खर्च करने के अलावा संसाधनों के बेहतर इस्तेमाल को लेकर 'कोई समझौता नहीं' की नीति पर चलना होगा। साथ ही, कुछ मामलों में जो अप्रिय स्थितियां उभरीं, जीता हुआ पदक हाथ से निकल गया, उससे बचने के लिए हर हाल में एक पुख्ता तंत्र बनाना होगा। अगर ठोस राजनीतिक इच्छाशक्ति हो और प्रतिभाओं के चयन तथा प्रशिक्षण को लेकर पूरी तरह ईमानदार और पारदर्शी व्यवस्था हो, तो ओलंपिक की पदक तालिका में हम भी सम्मानजनक स्थान हासिल कर सकते हैं।

राष्ट्रीय सहारा

Date: 13-08-24

व्यवहार में संतुलन जरूरी

अवधेश कुमार

संसद का बजट सत्र समाप्त हो गया, लेकिन लोक और सत्तारूढ़ गठबंधन के सांसदों, मंत्रियों और नेताओं द्वारा दिए गए प्रत्युत्तर ने ऐसे अनेक प्रश्न उठाए हैं, जिनका उत्तर तलाशना ही होगा। संसद में हमने कभी भी इस तरह के नैरेटिव और परिदृश्य नहीं देखे। राहुल गांधी ने विपक्ष के नेता के रूप में जिस तरह का भाषण दिया वैसा पहले कभी सुना नहीं गया। हालांकि पिछले दो वर्षों की उनकी राजनीति पर गहराई से दृष्टि रखने वालों के लिए यह अपेक्षित है।

17वीं लोक सभा के बाद के काल के लोक सभा में और बाहर उनके भाषणों और वक्तव्यों में एक क्रमबद्धता है। वह भले विवेकशील लोगों को पसंद न आए या पुराने कांग्रेसियों को भी स्वीकार नहीं हो किंतु वह इसी तरह की भाषा बोलते रहे हैं। चूंकि विपक्ष के नेता के रूप में वह बजट पर चर्चा कर रहे थे इसलिए स्वाभाविक ही मुख्य फोकस इसी पर होना चाहिए था। इस समय उनके सलाहकारों, रणनीतिकारों, थिंक टैंक आदि की रणनीति यही है कि हर अवसर पर ऐसा भाषण या वक्तव्य देना है जिनसे प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी और भाजपा की छवि जनता में दागदार हो, ऐसे मुद्दे उठे जिनका सीधा-सीधा उत्तर देना कठिन हो और इसके लिए किसी सीमा को स्वीकार करने की जरूरत नहीं। सामान्य तथ्यगत विरोध आक्रामकता के साथ होना कतई चिंता का विषय नहीं होगा। स्थिति इससे बहुत आगे है।

भारत और भारत से जुड़े वैश्विक नैरेटिव समूहों की स्थिति ऐसी है जिसमें हमें ज्यादातर एकपक्षीय स्वर इतने प्रभावी से सुनाई पड़ते हैं। कि उनमें आसानी से सच समझना कठिन हो जाता है। पूर्व केंद्रीय मंत्री अनुराग ठाकुर का लोक सभा भाषण इस मामले में सबसे ज्यादा निशाने पर है। अखिलेश यादव ने उस पर आपत्ति उठाते हुए कहा कि आप किसी की जाति कैसे पूछ सकते हैं?

राहुल गांधी ने कहा कि अनुराग ठाकुर ने उनको अपमानित किया है लेकिन मैं इन लोगों की तरह नहीं हूं इन्हें क्षमा मांगने के लिए नहीं करूंगा। ठाकुर भाजपा के वरिष्ठ नेता हैं, उनकी पार्टी सत्ता में है इसलिए कहा जा सकता है कि अति उत्तेजना और उकसावे के बीच भी उन्हें अंतिम सीमा तक संयम का परिचय देना चाहिए। दूसरे आप पर हमला करें और

आप उसी भाषा में बोले तो फिर दोनों के बीच अंतर कठिन हो जाता है। किंतु नैरेटिव की दुनिया में वर्चस्व रखने वाले समूह ने एक पंक्ति नहीं कहा कि राहुल गांधी ने अपने भाषण में सत्तारूढ़ पार्टी को उकसाने, उत्तेजित करने या चिढ़ाने में कोई कसर नहीं खेड़ते हैं। यहां तक कि बार-बार वे लोक सभा अध्यक्ष को भी परोक्ष रूप में कठघरे में खड़ा करते रहे। अध्यक्ष ओम बिरला के टोकने या आपत्ति करने पर उनका उत्तर होता था कि सर, इसे कैसे बोलें या सॉरी सर सॉरी सर, लेकिन वह उसी बात को सॉरी कहते हुए दोहराते भी रहे। अध्यक्ष के लिए भी उनको संभालना या रोकना असंभव हो गया है। यह पहली बार होगा जब संसद के अंदर विपक्ष के नेता ने सरकार को घेरने के लिए ऐस उपमा दी, जिसमें राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार तक घसीटे गए। चक्रव्यूह के बारे में राहुल गांधी को निश्चित रूप से कुछ गलत तथ्य दिए गए किंतु ऐसा हो जाता है। बावजूद उन्हें अपने पद के है। दायित्व का भान होना चाहिए था।

सत्तापक्ष हो या विपक्ष राष्ट्रीय सुरक्षा सर्वोपरि है। आपका सरकार से राजनीतिक वैचारिक मतभेद है और उसे प्रकट करने का अधिकार भी। वैसे उसमें भी सीमा है कि हम विरोध में कहां तक जाते हैं। कभी भी राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार को इस तरह राजनीतिक दल के हमले के साथ जोड़ा नहीं गया। आप कल्पना करिए इसका संदेश देश के अंदर और बाहर क्या जाएगा। आंतरिक सुरक्षा हमारे देश में कितने नाजुक स्थिति में लंबे समय तक रहा है। और बाहरी खतरे कितने बड़े हैं इसका अनुमान उन सब लोगों को है जो थोड़ा बहुत भी सुरक्षा स्थिति पर दृष्टि रखते हैं। इसमें राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है जिसे कभी सार्वजनिक नहीं किया जा सकता। राहुल गांधी के भाषण को आधार बनाकर देश के अंदर उनके समर्थक तथा सरकार विरोधी सीमा के पार भी भारत के अनेक सुरक्षा या विदेश नीति संबंधी निर्णयों को आसानी से निशाना बनाएंगे। उनका खंडन करना भारत के लिए ज्यादा कठिन होगा।

वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण के साथ बजट के पूर्व हलावा परंपरा की तस्वीरें डालकर उन्होंने राजनीति के अपनी जाति कार्ड को खेला। पिछले करीब 2 वर्षों से उनकी राजनीति में स्वयं को पिछड़ों दलितों का समर्थन तथा भाजपा को उसके विरुद्ध साबित करना सर्वोपरि हो गया है। परिणाम यह हुआ कि वित्त मंत्री ने यूपीए सरकार के कार्यकाल में हलवा परंपरा सहित कई तथ्यों का उल्लेख कर साबित कर दिया कि राहुल न केवल तथ्यात्मक रूप से तो गलत हैं बल्कि अपनी ही सरकार की परंपरा की धज्जियां उड़ा रहे हैं। इसी तरह सीतारमण के साथ खड़े अधिकारियों के बारे में भी कहा गया कि उनकी नियुक्ति तो राजीव गांधी सरकार के कार्यकाल में हुई थी। हालांकि राहुल गांधी ने बड़ी बुद्धिमत्ता से तस्वीर में से एक चेहरे हटा दिए जो वाकई पिछड़ी जाति का था। क्या सरकर की आलोचना या उसके विरोध के लिए संसदीय राजनीतिक मर्यादाओं की सीमा इस तरह लांघने और उनमें नौकरशाहों और प्रमुख पदों पर बैठे लोगों को निशाना बनाना उचित है? वे प्रधानमंत्री मोदी, गृहमंत्री अमित शाह के साथ देश के दो शीर्ष उद्योगपतियों के हाथों भारत संचालन का सूत्र बताएंगे तो इस पर उत्तेजना पैदा होगी और दूसरी ओर से भी कुछ लोग सीमा उल्लंघन कर आपको उसी तरह प्रति हमले का शिकार बनाएंगे। उन्होंने इसमें राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रमुख डॉ. मोहन भागवत को भी ले आया। ऐसा वह प्रयास करते हैं। वह इतना कुछ बोलते हैं, कभी संघ प्रतिवाद करने नहीं आता। संघ से सहमत या असहमत होना, इसका विरोध करना सबका अधिकार है पर इस दूसरे पहलू को भी कभी अपने चिंतन में लाना चाहिए। तथ्य और सत्य के आधार पर विरोध हो तो टिकाऊ होगा। हालांकि वर्तमान वातावरण में इसमें बदलाव की संभावना नहीं है। इसलिए देश के विवेकशील लोग, जिनमें राजनेता भी शामिल हैं शांत मन से सोचें, विचारें कि कैसे संतुलित तरीके से इसका प्रत्युत्तर दें तथा अपने व्यवहार से देश का वातावरण सकारात्मक शांत और संतुलित बनाए रखा जाए।